समकालीन कहानी साहित्य में स्त्री विमर्श

डॉ० स्वर्ण लता कदम
एसोसिएट प्रोफेसर
हिन्दी विभाग
शहीद मंगल पाण्डे राजकीय महिला
स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मेरठ

गीता
शोध छात्रा
शहीद मंगल पाण्डे राजकीय महिला
स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मेरठ

सारांश

हमारे समाज के पूर्ण विकास की रहा में कुछ प्रश्न ऐसे भी हैं जिनका समाधान किए बिना स्वयं पर गर्व करना बेमानी है। जिन्हें हल करने में विद्वान, समाजशास्त्री, राजनेता लेखक, चिंतक, शिक्षक एवं पत्रकारगण अपने-अपने तरीके से प्रयत्नशील हैं। ऐसा ही एक प्रश्न है? मानवता का सबसे बड़ा अभिशाप क्या है? सामान्य रूप से एक अमेरिकन कहेगा लादेन का इस्लामिक आतंकवाद, हम कहेंगे डी कम्पनी और नक्सलवाद, भ्रष्टाचार और अपराध, ईराक या अफगानिस्तान कहेंगे अमेरिका की निरंकुशलता। उक्त चिंतनीय समस्याएं जिस एक स्रोत की ओर इंगित करती है वह है? प्रत्येक देश में व्याप्त धार्मिक एवं साम्प्रदायिक वैमनस्य। परस्पर विद्वेष शासन करने की प्रवृत्ति, शोषण एवं अन्याय विभाजन हमारे युग के प्रमुख लक्षण है। वैचारिक निरंकुशता की इस भयंकर आंधी में कोई ऐसा भी है जो चाहें हिंदू हो या मुस्लिम, यहुदी हो या गरीब, देश में हो या विदेश में, सब एक तरफ

निशाने पर होता है, प्रताड़ित किया जाता है। यहाँ मेरा आशय प्लेनेट की उस आधी आबादी से है जिसका नाम स्त्री है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि वह पृथ्वी के किस क्षेत्र की निवासिनी है? कौन से समाज, संस्कृति से जुड़ी है? कौन सी भाषा बोलती है? किस साहित्य का कथ्य और किस राजा की प्रजा है? स्त्री का कहीं भी, कभी भी कोई बचाव नहीं। वह कहीं पूर्ण रूपेण सुरक्षित नहीं स्वतंत्र नहीं।

समकालीन साहित्य में स्त्री विमर्श विषय बहुत प्रासंगिक एवं महत्वपूर्ण है। स्त्री विमर्श, नारीवाद, नारी सशक्तिकरण आदि एक ही सिक्के के दो विभिन्न पहलू हैं। स्त्री को परिवार व समाज की धुरी कहा जाता है लेकिन क्या इस सिद्धान्त व व्यवहार में एकरूपता दिखाई देती है। किसी परिवार को चलाने में उसे बनाये रखने में एक स्त्री की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। हमारे इस पितृसत्तात्मक परिवार जो हमारे पितृ-सत्तामक समाज का एक अंग है उसमें नारी की महत्वपूर्ण भूमिका को यथायोग्य महत्व प्रदान नहीं किया जाता है। इस प्रकार के समाज में नारीवाद, नारी सशक्तिकरण अथवा स्त्री विमर्श आदि शब्द एक आन्दोलन के रूप में उभरते हैं, तो यह समाज जैसे चैंक जाता है। एक नारी को दासता से मुक्ति की प्रक्रिया में विभिन्न प्रतिक्रियाओं का सामना करना पड़ता है। समाज की दृष्टि में नारी मुक्ति के संघर्ष कांे जैसे अनैतिक आचरण का पर्याय माना जाता है। इसके विरोध में तर्क दिया जाता है कि यह स्त्री विमर्श या नारी मुक्ति की अवधारणा है। वहां के समाज की जीवन शैली मूल्य बोध, परम्परा से तीसरी दुनिया की औरतों का क्या सम्बन्ध हो सकता है। हमारा समाज इस अवधारणी को अराजक मानसिकता का परिणाम घोषित करता है। वास्तव में इस प्रकार की सभी धारणाएं निर्मूल व भ्रामक हैं, क्योंकि स्त्री विमर्श तो किसी विचारधारा और जीवन शैली का एक ही रूप है।

बीज शब्द

1.स्त्री विमर्श

2.जैविक पूर्णता

3.समकालीन

4.शोषण

5.उपभोक्तवादी संस्कृति

6.अस्तित्व के संघर्ष

7.अधिकार

8.आत्मसंघर्ष

9.नारी शक्तिकरण

10.मूल्यबोध

वह अपने जीवन की सार्थकता को अपने निजी अस्तित्व के संदर्भ में उपलब्ध कराना चाहती है। प्रकारांतर से आधुनिक युग में स्त्री का यह विद्रोह हजारों वर्षों की अमानवीय पितृसत्ता की दासता को एक खुली चुनौती है। इस दासता में स्त्री का संपूर्ण जीवन एवं अस्तित्व हर पल घुटता रहा है, चाहे वह चैखट के बाहर की, चाहे वह घर हो या बाजार, चाहे वह धर्म हो या समाज चाहे वह परंपरा हो या संस्कृति, चाहे वह नियम हो या रीति-रिवाज हर जगह उसे बांधा एवं जकड़ा गया। कभी धर्म एवं नैतिकता की आड़ में तो कभी शास्त्रों एवं परम्परा की दुहाई देकर। तमाम नियम सिर्फ उसके लिए बनाए गये हैं, पर उसका अपना कुछ भी नहीं। वह तो बस एक मादा है एक वस्तु है, एक चीज है, एक सम्पत्ति है, एक देह है और एक माध्यम है पुरुष का पुरुष के द्वारा और पुरुष के लिए मनोरंजन, क्रय-विक्रय, प्रजनन भोग और शोषण का.....

“औरत ने जन्म दिया मर्दो को, मदो ने उसे बाजार दिया।

जब जी चाहा मचला-कुचला, जब चाहा दुत्कार दिया।
चुनती है कहीं दिवारों में बिकती है कहीं बाजारों में।
नंगी नचवाई जाती है अय्याशों के दरबारों में
यह वह बेइज्जत चीज है, जो बँट जाती है, इज्जतदारों में।"

सम्भवतया विधाता ने जब सृष्टि - निर्माण की कल्पना की होगी तो उसने दो महत्वपूर्ण किरदारों को सोचा होगा। इन दो किरदारों को उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप शारीरिक व मानसिक संरचनाएं प्रदान करने पर जो स्वरूप उभरा उनमें से एक को स्त्री कहा, दूसरे को पुरुष। दोनों को अपनी-अपनी भूमिकाओं को निभाने के लिए जहां एक ओर समुचित दैहिक व जैविक पूर्णता दी वहीं दूसरी ओर एक को दूसरे का पूरक भी बनाया। उसने किसी भी रूप में एक को उत्कृष्ट या दूसरे को निकृष्ट बनाकर नहीं भेजा। लेकिन पुरुष ने स्त्री जाति को उसके किरदार निभाने के अनुरूप जो अत्यंत संवेदनशील दैहिक व जैविक स्वरूप मिला उसे उसकी कमजोरी के रूप में देखा और फिर सिलसिला शुरू हुआ स्त्री के शोषण का। पुरुष का शारीरिक बलिष्टता को हथियार बनाकर स्त्री को दासी की स्थिति तक पहुंचाने का प्रयास किया और समाज पुरुष प्रधान होता चला गया। पुरुष प्रधानता ने नारी जीवन की सुखद कल्पनाओं एवं सुनहरे सपनों को अप्रत्याशित रूप में ध्वस्त कर दिया, पुरुष प्रधान समाज में स्त्रियों का दमन कोई नई बात नहीं है। पुरुष प्रधान समाज में स्त्रियों का दमन कोई नयी बात नहीं है। स्त्री आरम्भिक काल से ही कुंठाए लिए जीती चली आ रही है। उसकी इच्छाओं आकांक्षाआंें का दमन सदैव से ही होता चला आ रहा है। सरकार एवं संयुक्त राष्ट्रसंघ भी इस समस्या की ओर जागरूक हैं। राजकीय, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों पर विविध प्रयास किए जा रहे हैं। विश्व की महिलाओं के उत्थान के हर संभव प्रयास की सम्भावनाऐं खोजी जा रही है।

मानव जीवन की बदलती मानसिकता को अपने कैनवास पर चित्रित करना ही कहानीकार, का ध्येय हैं। मनुष्य की मानसिकता के परिवर्तित होते ही मूल्य परिवर्तन का जन्म होता है। आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में नारी की मानसिकता में जो परिवर्तन हुआ है उन्हीं के कारण नारी सम्बन्धी परम्परागत मूल्यों में भी बदलाव आया है। अब वह ताड़ना की अधिकारिणी न रहकर सभी क्षेत्रों में पुरुष के समकक्ष होने की स्वीकृति प्राप्त करने लगी है। समकालीन कहानीकार नारी के संघर्ष को वाणी देते हुए एक विशाल फलक लेकर आए। ये नारी जीवन के पारम्परिक मूल्यों को ध्वस्त करते हुए नए मूल्यो के रूपायन में संलग्न हुए। आज भी विभिन्न स्तरों पर स्त्री के प्रति संकुचित मानिसकता विद्यान है। समाज में विद्यान यह संकुचित मानसिकता हमें साहित्य में भी स्पष्ट दिखाई देती है, क्योंकि साहित्य समाज से कटकर नहीं रह सकता। स्त्री का विभिन्नन समस्याआंें, उनकी दीन हीन दशा, नाटकीय जीवन तथा उनके साथ होने वाले पशुवत व्यवहार से हमारा साहित्य भरा पड़ा है। महिला नारी कहानीकारों में ही नहीं बल्कि विभिन्न पुरुष कहानीकारों ने भी स्त्री की विभिन्न समस्याओं व उन समस्याओं के प्रति उसके संघर्ष को जीवंत रूप में समाज के सामने प्रस्तुत किया है। नारी आत्मसंघर्ष, मुक्ति के लिए छटपटाहट व विभिन्न नारी विरोधी शक्तियों के साथ संघर्ष की कहानी के रूप में हिन्दी कहानी साहित्य को देखा जा सकता है।

"भारतीय समाज में प्रारम्भ से ही स्त्रियों की स्थिति शोचनीय रही है। स्त्री होने के कारण बचपन से लेकर शादी के बाद तक उन पर कठोर नजर रखी जाती थी ताकि वे व्याभिचारिणी न हो जाएँ।" "विडम्बना की बात यह है कि समाज का आधा भाग स्त्री हैं किन्तु फिर भी वह प्रताड़ित है। अपने स्त्री योनि में जन्म लेने पर शर्मिन्दा व क्षुब्ध है, आखिर क्यों स्त्री अपने अधिकारों के लिए आवाज नहीं उठाती कब स्त्री समाज जागेगा, कब तक

पुरूषों का दमन चक्र चलता रहेगा। इस दमन चक्र को तोड़ने के लिए स्वयं स्त्री को आगे आना होगा।"

चिंतन करना व्यक्ति के युक्तिपरक होने का प्रमाण है। इसी विशेषता के कारण व्यक्ति व पशु में अंतर किया जाता है। लेकिन जब स्त्री ने अपनी इस कुंठा का प्रयोग करते हुए स्वयं से प्रश्न किया कि क्या मेरी भी कोई मानवीय गरिमा है? तो उसे इसका उत्तर नकारात्मक प्राप्त होता है। समाज के स्वरूप व उसके यथार्थ को देखकर उसकी समझ में आता है कि इंसान की श्रेणी में तो केवल पुरुष है, स्त्री का स्थान तो संपूरक का है। प्रभा खेतान की "उपनिवेश में स्त्री' तथा 'मुक्ति कामना की दस वार्ताएं" स्त्रियों की विभिन्न स्थितियों को दर्शाती है। ये वार्ताएं प्रेम के द्वंद में उलझी हुई स्त्री, मानवीय गरिमा की खोज में जुटी हुई स्त्री, बौद्धिक बनती हुई स्त्री, रचना में लिप्त स्त्री, कान्ति के ज्ञान से संघर्ष करती स्त्री, स्त्री ज्ञान मीमांसा की नियति बनाती हुई स्त्री तथा भाषा व विमर्श के जंजाल में फंसी हुई स्त्री से सम्बन्धित है।

डा॰ ममता जैन की "जमीन जल रही है" कहानी नारी की उस घुटन, संत्रास व संघर्ष करती एक नारी की कहानी है। इसी नारी पात्र प्रेक्षा का आत्ममंथन, आत्म संधर्ष व उसकी घुटन हम निम्न पंक्तियों में देख सकते हैं- "बस में तीव्र गति से प्रेक्षा का मस्तिष्क चक्र गतिमान था। श्वास दीर्घतम हो रक्त के उबाल से उष्ण हो मुँह से निकले पड़े थे। शुष्क कंठ, चिपका तालू, पैरों की कंपकपाहट हो हृदय में उमड़ता-घुमड़ता ज्वार विस्मृत कराये जा रहा था। बार-बार यह पुनरावृत्ति हो रही थी कि नारी के प्रति क्यूँ इतनी दुर्भावना पुरुषों के अन्तस में निहित हो गई? अपने घर की आर्थिक स्थिति की सुदृढ़ता देकर नारी ने आखिर पुरुषों पर कौन सा डाका डाल दिया? क्या अपरहरण कर लिया उनका? यदि आज नारी शिक्षित है तो अपने परिश्रम से अपने

मस्तिष्क से और अपने प्रयासों से। पुरुषों से तो कुछ लिया नहीं। नारी ने वर्तमान में यदि अपने अस्तित्व अस्मिता, आत्मगौरव व पदसंबल को अनुभूत किया है तो पुरुषों को क्यों हुई तिलमिलाहट और यह अनचाही बौलखलाहट जब सदियों तक गुलामी की तरह चाकरी करती रही तब तो उसे बख्शीश में कभी चेतन प्राणी भी नहीं समझा और आज जरा सा अवगुंठन हटाकर झांकने की कोशिश की तो इतनी खिन्नता और झुझलाहट क्यूँ है? इतनी दुर्भावना क्या नारी तभी श्रद्धापात्र की और पूज्या व आदरणीय थी। जब अशिक्षित और अबला बन पुरुष के पैर की जूती बनी रही। अरे मानवीय व श्रद्धास्पद तो उसे समझना चाहिए था, जब उसने मर्दजात को हर कदम पर हर क्षेत्र में पछाड़ कर रख दिया है।"

समकालीन कहानीकारों ने नारी के एक ओर रूप क चित्रण भी बड़ी सफलता के साथ किया है। इसी प्रकार अंजु दुआ जैमिनी की सीली दीवार कहानी की नायिका कमलेश आर्थिक विपन्नता, पति के निकृष्ट व्यवहार, उसकी नित्यप्रति की मार आदि सबकों चुपचप रहती चलती है फिर भी पति को परमेश्वर मानती है। पति के खाना मांगने पर वह कहती है- "खाना तो मैंने भेजा था, वो क्या आपने नहीं खाया?" उसका इतना कहना था कि जमाई बाबू उस पर पिल पड़े- साली ..... और खाना मांगा तो गुनाह कर दिया? अपने बाप को खाली दिया होगा सारा। वो बुड्ढा इतने दिनों से यहां डटा है, उसके लिए तर माल बनाती है। मैं दुबारा मांगू तो पूछती है।

उपर्युक्त उदाहरण में नायिका कमलेश की दयनीय स्थिति दिखाई देती है। यह एक कमलेश की कहानी न होकर हमारे स्त्री समाज के एक बहुत बड़े भाग की कहानी है। यह एक सच्चाई है कि दिस दैहिक व जैवकि संरचना को उसकी कमजोरी समझकर पुरुष ने उसका शोषण किया उसी को

आज नारी ने अपनी ताकत बना लिया है। समकालीन प्रेमिका अपने प्रेमी द्वारा छोड़े जाने पर शोक नहीं मनाती ये अपने स्वतन्त्र व्यक्तित्व को स्थापित करना चाहती है। यही कारण है कि इनके दाम्पत्य जीवन में भी विस्फोटक स्थिति का समावेश हो गया है। "कुछ समय तक वह अपने प्रथम प्रेमी के साथ लगाव रखती है और उसी के साथ रहती भी है। यह उसका प्रतिदिन का काम हो जाता है। जब उसका प्रेमी छोड़ देता है तब वह दूसरे प्रेमी का सहारा लेती है। अब वह किसी एक व्यक्ति विशेष की नहीं रह जाती।"

' 'भारतीय समाज में विधवाओं की स्थिति प्रारम्भ से ही दयनीय रही है। प्रति के बिना पत्नी की कोई सामाजिक सत्ता नहीं होती।" रमेश उपाध्याय की कहानी "माटी मिली" और अरूण भारतीय की "गटर" कहानियों में विधवा स्त्री के प्रति समाज की अश्लील दृष्टि और उसे शारीरिक, मानसिक रूप से शोषित करने की प्रवृत्ति को उजागर किया गया है। रामदरश मिश्र ने अपनी कहानी 'एक औरत की जिन्दगी' में एक विधवा स्त्री के जीवन संघर्ष का चित्रण करते हुए उसकी जिजीविषा को दिखाया है। समकालीन कहानियों में विधवाओं के मूल्य परिवर्तन की अभिव्यक्ति करते हुए वंदना कहती है- "अब मैं भी बेड़ी तोड़ने का निर्णय लेती हूँ।" नारी जीवन में आए बदलाव ने माँ के रूप को भी बदल दिया है। धाय माँ नहीं वरन् कामकाजी माँ के रूप में अवतरित हुयी है। अपने इस नए रूप में उसे संघर्ष की स्थिति का सामना करना पड़ रहा है।

समकालीन कहानी का एक बहुत बड़ा हिस्सा ऐसी स्त्रियों पर केन्द्रित है जो वेश्यावृत्ति और कालगर्ल के धंधे में लगी हुई है। जगदम्बा प्रसाद दीक्षित की गंदगी और गुलाब' परितोष चक्रवर्ती की "सड़क नंबर तीस' चित्रा मुदगल की 'फातिमा बाई कोठे पर नहीं रहती" व 'इस हमाम में' श्रीकांत वर्मा की "यात्रा" तथा विजय की "कसाई' आदि कहानियों में

वेश्यावृत्ति और कालगर्ल के पेशे में सक्रिय स्त्रियों के संघर्षपूर्ण जीवन और उनकी समस्याओं को उठाते हुए उनके जीवन के उन मार्मिक पक्षों को पकड़ने की कोशिश की है जहां वे पूरी तरह से वेश्या अथवा कार्ल गर्ल नहीं बनी हैं, बल्िक उनके अंदर सभी स्त्रीत्व के कुछ गुण बचे हैं।

आज की नारी बेबस, असहाय व अबला नहीं है, वरन उसने स्वयंसिद्धा वाली शक्ति पा ली है। जिस प्रकार हिमालय की चोटी को छूकर उषा की प्रथम किरण और स्वर्णिम हो जाती है उसी प्रकार कहानीकार की लेखनी स्पर्श पा युग की प्रवृत्तियों का बदलाव इन्द्रधनुषीय सतरंगी रंगों में अभिव्यक्ति पाता है। पुरातन परम्पराओं से टकराकर जीने की चाहत में नारी, जीवन की मुख्य धारा से अलगाव कर बैठती है। यह अलगाव कभी-कभी इतना घातक होता है कि वो चाहकर भी मुख्य धारा में वापिस नहीं लौट पाती है।

निष्कर्ष-इस प्रकार हम देखते हैं कि नारी की इस स्थिति को देखकर मन में विभिन्न सवाल उठ खड़े होते हैं कि क्या नारी केवल सहनशीलता की प्रतिमा का ही नाम है? क्या उसे पुरुष की भांति इस समाज में स्वतंत्र अस्तित्व खोजने, तार्किक दृष्टिकोण अपनाने अथवा अपने आत्मसम्मान तथा आत्मगौरव की रक्षा करने का अधिकार नहीं है? इसी संदर्भ में मुझे प्रेमचन्द्र की उक्ति याद आती है- "जब किसी नारी में पुरुष के गुण आ जाते हैं तो वह कुलटा बन जाती है और जब किसी पुरुष में नारी के गुण आते हैं तो वह महान बन जाती है।"

इस उक्ति के माध्यम से प्रेमचन्द जी ने समाज में पुरुष वर्चस्व व नारी की दीन-हीन दशा की ओर ही संकेत किया है तथा साथ ही समाज में नारी तथा पुरुष के मूलभूत अंतर को भी इंगित किया है। समकालीन युगीन नारी चेतना को उसकी समग्र जटिलताओं के साथ चित्रित करने का एक

सराहनीय प्रयास है। लेकिन साथ ही आज हम एक द्वन्दात्मक स्थिति से गुजर रहे हैं। एक ओर तो नारी विमर्श के इस युग में नारी की स्वतंत्रता व समानता की बाते हो रही हैं तो दूसरी तरफ उपभोक्तावादी संस्कृति के परिणामस्वरूप नारी देह को लेकर कामुक, उत्तेजक विज्ञापन, देह सौन्दर्य प्रतियोगिताएं आदि उसे फिर से 'वस्तु' या चीज की श्रेणी में लाकर खड़ा कर देते हैं। इसलिए हमें उपभोक्तावादी संस्कृति के नकारात्मक पक्षों को ध्यान में रखते हुए नारी सम्बन्धी स्वस्थ व मर्यादित दृष्टिकोण अपनाते हुए नारी जागृति, चेतन स्वतंत्रता, समानता व अस्तित्व के संघर्ष को साहित्य के माध्यम से वाणी देने के इस प्रयास को आगे बढ़ाना होगा। समकालीन कहानीकारों ने नारी की महत्वाकांक्षाआंें के पहाड़ों भावनाओं की गहरी नदियों और अभिलाषाओं की चंचल तरंगों को अपनी रचना-मंजूषा में संजोया है। समकालीन कहानीकारों ने शोषण की पीड़ा सहती नारी मे जागृति का संचार कर उसे अधिकारों के प्रति जागरूक किया है। बदलाव अब सर्वत्र व्याप्त है। जिसे आज की महिला व पुरुष कथाकारों ने विविध रूपों में चिचित्र किया है-

संदर्भ

1. *S.C.k~ Dubey, Indian Society Page - 107*
2. *रेखा कोकचा, दमन पृष्ठ संख्या 54*
3. *डॉ॰ ममता जैन की कहानी - जमीन जल रही है(युग कथा) पृ॰ सं॰ 350.51*
4. *रेखा कोकचा, दमन पृष्ठ संख्या 127*
5. *अंजु दुआ जैमिनी - सीली दिवार" युग कथा, पृ॰ सं॰ 326)*
6. *(सीमोन द बोउवार, स्त्री उपेक्षिता, अनु॰ प्रभा खेतान पृष्ट सं॰ 249-50)*
7. *Uma Chakravarty, Gender Caste and Labour :*

Ideological and Material Structure of Widowhood, Page 2248

8. *रेखा कोकचा, 'दमन' पृष्ठ संख्या 46*
9. *मुंशी प्रेमचन्द, 'गोदान', पृष्ठ सं॰ 124*